[2019] 2 एस.सी.आर. 692

रजिस्ट्रार जनरल के माध्यम से त्रिपुरा का उच्च न्यायालय
वि
तीर्थ सारथी मुखर्जी और अन्य।

(सिविल अपील संख्या 1264/ 2019)

फ़रवरी 06, 2019.

[अशोक भूषण और के.एम. जोसेफ, न्यायाधीशगण]

न्यायिक सेवाएँ - त्रिपुरा न्यायिक सेवा - उत्तर पुस्तिकाओं का पुनर्मूल्यांकन पहले प्रतिवादी द्वारा दायर की गई रिट याचिका - परिणामों को चुनौती देना और पुनर्मूल्यांकन की मांग करना उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दिया गया था - एसएलपी सुप्रीम कोर्ट द्वारा खारिज कर दिया गया - 5 साल बाद, रिट याचिका खारिज होने के खिलाफ समीक्षा याचिका दायर की गई, जिसे उच्च न्यायालय ने अनुमति दे दी थी। हस्तगत मामले में, अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि पुनर्मूल्यांकन की मांग करने का कोई अधिकार तब तक नहीं है जब तक कि कोई प्रावधान एक उम्मीदवार को पुनर्मूल्यांकन की मांग करने का अधिकार नहीं देता हो और अत्यधिक देरी हुई जिसके कारण समीक्षा याचिका दायर की गई -अभिनिर्धारित: किसी भी प्रावधान के अभाव में, न्यायालय को आम तौर पर पुनर्मूल्यांकन का निर्देश नहीं देना चाहिए - न्यायालय पुनर्मूल्यांकन की अनुमति केवल तभी दे सकती है जब इसे तर्क की अनुमानात्मक प्रक्रिया के बिना या युक्तिकरण की प्रक्रिया के बिना बहुत स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया गया हो और केवल दुर्लभ या असाधारण मामलों में महत्वपूर्ण त्रुटि हुई हो-वर्तमान मामले में, एसएलपी की बर्खास्तगी के 5 साल बाद उच्च न्यायालय में समीक्षा याचिका दायर की गई थी,इस दौरान, बीच में नए चयन के रूप में पर्यवेक्षणीय विकास हुआ था - एक दुर्लभ या असाधारण मामले के रूप में, वर्णन करना सही नहीं हो सकता है जबकि पहला प्रतिवादी लगभग 5 साल की देरी से

अदालत में पहुंचता है, जिससे बाद की घटनाएं उससे व अदालत से आगे निकल जाती हैं उच्च न्यायालय को समीक्षा याचिका की अनुमति नहीं देनी चाहिए - विलंब/लाचेस - भारत का संविधान - अनुच्छेद 226.

कोर्ट ने अपील स्वीकार करते हुए

माना गया: 1. पुनर्मूल्यांकन के लिए किसी प्रावधान के अभाव में पुनर्मूल्यांकन का दावा करने या मांगने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है। निस्संदेह, कोई प्रावधान नहीं है. वास्तव में, उच्च न्यायालय ने भी आक्षेपित निर्णय में उक्त आधार पर कार्यवाही की है। पहला प्रश्न जिसका उत्तर देना है वह प्रावधान की अनुपस्थिति के बावजूद, क्या न्यायालयों को पुनर्मूल्यांकन का निर्देश देने की शक्ति से संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अधिकार क्षेत्र के प्रयोग करने से पूरी तरह से वंचित कर दिया गया है? यह सच है कि परमादेश की रिट मांगने का अधिकार कानूनी अधिकार के अस्तित्व और सार्वजनिक कर्तव्य को पूरा करने के लिए उत्तर देने वाले के साथ संबंधित कर्तव्य पर आधारित है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि अधिकार के रूप में,पहला प्रतिवादी पुनर्मूल्यांकन की मांग करने वाली रिट याचिका या समीक्षा याचिका को बरकरार नहीं रख सका।

2. हालांकि सवाल यह उठता है कि भले ही पुनर्मूल्यांकन की मांग करने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है, फिर भी ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो सकती हैं जो न्यायालय को किसी भी संदेह में छोड़ देती हैं। कुछ परिस्थितियों में रिट कर्ता के साथ गंभीर अन्याय हो सकता है। ऐसा मामला सामने आ सकता है जहां पुनर्मूल्यांकन का कोई प्रावधान न होने के बावजूद यह पता चले कि सही उत्तर देने के बावजूद कोई अंक नहीं दिए गए हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह उस मामले तक ही सीमित होना चाहिए जहां उत्तर की शुद्धता के बारे में कोई विवाद नहीं है। इसके अलावा, यदि कोई संदेह है, तो संदेह का समाधान उम्मीदवार के पक्ष में नहीं बल्कि परीक्षा निकाय के पक्ष में किया जाना चाहिए व जहां पुनर्मूल्यांकन का कोई प्रावधान न हो वहां भी अनुच्छेद 226 के तहत व्यापक शक्ति तब भी उपलब्ध रह सकती है जहां एक उम्मीदवार ने सही उत्तर देने के बावजूद और जिसके बारे में थोड़ा सा भी संदेह नहीं किया जा सकता है, उसने गलत उत्तर दिया है उसे गलत उत्तर माना जाता है। परिणामस्वरूप उम्मीदवार किसी भी अंक का हकदार नहीं पाया जाता है।

3. किसी प्रावधान के अभाव में न्यायालय को आम तौर पर पुनर्मूल्यांकन का

निर्देश नहीं देना चाहिए। हस्तगत मामले में, परिणामों को चुनौती देते हुए और पुनर्मूल्यांकन की मांग करते हुए रिट याचिका दायर की गई थी। रिट याचिका वर्ष 2012 में उच्च न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गई। विशेष अनुमति याचिका वर्ष 2013 में खारिज कर दी गई थी। समीक्षा याचिका लगभग 5 साल बाद दायर की गई है। अंतराल में, नए चयन के रूप में पर्यवेक्षणीय विकास हुआ। हालांकि यह सच हो सकता है कि समीक्षा याचिका दायर करने में हुई देरी को माफ कर दिया गया है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि न्यायालय जहां अनुच्छेद 226 के तहत अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है, वह बाद के विकास और समय बीतने के प्रभाव से बेखबर हो जाएगा।

4.न्यायालय पुनर्मूल्यांकन की अनुमति केवल तभी दे सकती है जब इसे तर्क की अनुमानात्मक प्रक्रिया के बिना या युक्तिकरण की प्रक्रिया के बिना बहुत स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया गया हो और केवल दुर्लभ या असाधारण मामलों में महत्वपूर्ण त्रुटि हुई हो। मामले को दुर्लभ या असाधारण मामले के रूप में चिह्नित करना सही नहीं हो सकता है जब पहला प्रतिवादी लगभग 5 साल की देरी से अदालत में पहुंचता है और बाद की घटनाओं को उस पर और अदालत पर हावी होने देता है। उच्च न्यायालय द्वारा इस पहलू की पूरी तरह से सराहना नहीं की गई। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह समीक्षा मुख्य मामले की दोबारा सुनवाई नहीं है। किसी स्पष्ट त्रुटि पर अधिक बहस किए बिना केवल उसका पता लगाने पर ही समीक्षा की जाएगी। यहीं पर इस न्यायालय को परीक्षा के भाग III में प्रश्न से संबंधित अपीलकर्ता के तर्क पर ध्यान देना चाहिए, जिससे न्यायालय का ध्यान आकर्षित हो क्योंकि प्रथम प्रतिवादी ने अकेले ही इस पहलू को उच्च न्यायालय के समक्ष रखा था। रिट याचिका में उच्च न्यायालय का निर्णय अपीलकर्ता की इस दलील को दर्शाता प्रतीत होता है। पेपर III के मूल्यांकन में विसंगति से संबंधित मुद्दे पर फैसले में विस्तार से चर्चा की गई है। इस न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को प्रभावित नहीं किया गया है। इसके बावजूद उच्च न्यायालय ने आक्षेपित फैसले में भाग- I और भाग- II में प्रश्नों से संबंधित याचिका को आगे बढ़ाया और समीक्षा याचिका पर विचार करते हुए लगभग ५ साल बीतने के बाद भी राहत दी। यह वर्तमान अपील की अनुमति देने के लिए पर्याप्त है। यह न्यायालय इस आधार पर अपने निष्कर्ष को विराम देना चाहेगा कि पुनर्मूल्यांकन प्रदान करने वाले प्रावधान द्वारा दिए गए अधिकार से लैस न होने और पहले से ही

निर्धारित तथ्यों और बताए गए कारणों के आधार पर, उच्च न्यायालय को समीक्षा याचिका की अनुमति नहीं देनी चाहिए थी .

हिमाचल प्रदेश लोक सेवा आयोग बनाम मुकेश ठाकुर एवं अन्य। (2010) 6 एससीसी 759 [2010] 7 एससीआर 189; प्रमोद कुमार श्रीवास्तव बनाम अध्यक्ष, बिहार लोक सेवा आयोग, पटना एवं अन्य। (2004) 6 एससीसी 714: [2004] 3 पूरक। एससीआर 372; सचिव, अखिल भारतीय प्री-मेडिकल/प्री-डेंटल प्रवेश परीक्षा एवं अन्य के माध्यम से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड। बनाम खुशबू श्रीवास्तव और अन्य। (2014) 14 एससीसी 523: [2011] 10 एससीआर 286 पर भरोसा किया गया।

के. राजमौली बनाम. ए.वी.के.एन. स्वामी (2001) 5 एससीसी 37: [2001] 3 एससीआर 473; रण विजय सिंह एवं अन्य। बनाम उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य। (2018) 2 एससीसी 357: [2017] 12 एससीआर 95; गंगाधर पालो बनाम राजस्व मंडल अधिकारी एवं अन्य: (2011) 4 एससीसी 602: [2011] 3 एससीआर 746; बनाम अच्युतन बनाम मुकेश ठाकुर (2010) 6 एससीसी 759; यू.पी.पी.एस.सी. इसके अध्यक्ष एवं अन्य के माध्यम से। बनाम राहुल सिंह और अन्य। [2018] एससीआर 28; सलेम एडवोकेट्स बार एसोसिएशन केस (2005) 6 एससीसी 344 [2005] 1 सप्ल। एससीआर 929 का उल्लेख किया गया है।

केस कानून संदर्भ

[2001] 3 एससीआर 473	रैफर किया गया।	पैरा 5
[2004] 3 पूरक। एससीआर 372	पर भरोसा किया	पैरा 6
[2017] 12 एससीआर 95	रैफर किया गया।	पैरा 8
[2011] 3 एससीआर 746	रैफर किया गया।	पैरा 11
[2010] 7 एससीआर 189	पर भरोसा किया	पैरा 14
[2011] 10 एससीआर 286	पर भरोसा किया	पैरा 16
[2017] 12 एससीआर 95	रैफर किया गया।	पैरा 18
[2018] एससीआर 28	रैफर किया गया।	पैरा 22
[2005] 1 पूरक। एससीआर 929	रैफर किया गया।	पैरा 25

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 1264/2019

उच्च न्यायालय के निर्णय एवं आदेश दिनांक 19.03.2018

गुहाटी उच्च न्यायालय की समीक्षा संख्या 21/2018

नरेश के. शर्मा, सलाहकार। अपीलकर्ता के लिए. अधिवक्ता

श्रीमती उर्मिला सिरूर, कबीर शंकर बोस, सुवोदीप रॉय, पी. आई. जोस, सुश्री पी.एस. चंद्रलेखा, दिनेश के गर्ग, अभिषेक गर्ग, धनंजय सी गर्ग, दीपक मिश्रा, सलाहकार। उत्तरदाताओं के लिए.

तीर्थ सारथी मुखर्जी, व्यक्तिगत रूप से।

न्यायालय का निर्णय के. एम. जोसेफ, न्यायाधीश द्वारा सुनाया गया

1. विशेष अनुमति द्वारा अपील 2018 की समीक्षा याचिका संख्या 21 में गौहाटी उच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 19.03.2018 को पारित आदेश के खिलाफ निर्देशित है। आक्षेपित आदेश के अनुसार, बर्खास्तगी के खिलाफ प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा दायर समीक्षा याचिका उनकी रिट याचिका को स्वीकार कर लिया गया है और न्यायालय ने त्रिपुरा न्यायिक सेवा में ग्रेड- । के पद पर चयन के संबंध में उनके उत्तर पत्रों के पुनर्मूल्यांकन का निर्देश दिया है।

2. विज्ञापन दिनांक 18.01.2011 द्वारा, त्रिपुरा न्यायिक सेवा में ग्रेड-I के रूप में नियुक्ति के लिए अभ्यासरत अधिवक्ताओं से आवेदन आमंत्रित किए गए थे। 3 रिक्तियां अधिसूचित की गईं। विज्ञापन के अनुसार, प्रतिवादी नंबर 1 12.06.2011 को आयोजित प्रारंभिक परीक्षा में उपस्थित हुआ। परिणाम 24.06.2011 को घोषित किये गये। याचिकाकर्ता को 16 अन्य उम्मीदवारों के साथ योग्य दिखाया गया था। मुख्य। परीक्षा 30.07.2011 और 31.07.2011 को आयोजित की गई थी। लिखित परीक्षा में 3 पेपर शामिल थे। मुख्य परीक्षा का परिणाम 29.09.2011 को घोषित किया गया था जिसमें प्रतिवादी संख्या 1 को अयोग्य घोषित कर दिया गया था। उन्होंने सूचना का अधिकार अधिनियम, 2005 के तहत अंकों का खुलासा करने की मांग की। हालांकि, उन्हें 01.11.2011 को अपनी उत्तर पुस्तिकाओं का निरीक्षण करने की अनुमति दी गई थी। यह प्रतिवादी नंबर 1 का मामला है कि कुछ सही उत्तरों को गलत के रूप में चिह्नित किया गया था। उन्होंने 300 में से

175 अंक हासिल किए। इस प्रकार, साक्षात्कार में शामिल होने के लिए उनके पास 5 अंक कम थे क्योंकि आवश्यकता 60% थी। उन्होंने 2012 की रिट याचिका संख्या 1809 दायर की, जिसमें पेपर I, II और III में उनके उत्तर पत्रों के पुनर्मूल्यांकन की मांग की गई और उन्हें साक्षात्कार के लिए अयोग्य ठहराए जाने के निर्णय को अमान्य घोषित किया गया। उक्त रिट याचिका 12.12.2012 को खारिज कर दी गई। प्रतिवादी ने इस न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिका दायर की जिसे 23.07.2013 को खारिज कर दिया गया। इसके बाद उन्होंने समीक्षा याचिका दायर की। समीक्षा याचिका में, उच्च न्यायालय ने पाया कि 2003 के नियमों के तहत, जो स्पष्ट रूप से परीक्षा के संचालन को नियंत्रित करते थे, उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन का कोई प्रावधान नहीं है। हालाँकि, यह पाया गया कि पुनर्मूल्यांकन के खिलाफ कोई प्रतिबंध नहीं है, बशर्ते इसमें कोई पेटेंट त्रुटि पाई जाए। इसमें सही उत्तर के लिए कोई अंक न देना या सही उत्तर को गलत उत्तर मानना शामिल हो सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि न्यायालय को यह ध्यान में रखना होगा कि वह परीक्षक के स्थान पर कदम नहीं रख सकता है और एक सुपर परीक्षक की तरह पुनर्मूल्यांकन का कार्य नहीं कर सकता है। इसके बाद निम्नलिखित निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है:-

> "25. हमने पेपर- I और पेपर- II दोनों में याचिकाकर्ता की उत्तर पुस्तिकाओं का अध्ययन किया है। हमारे लिए, पेपर के प्रश्न संख्या 3 (xiii), 2 (xviii) और 3 (xv) के संबंध में दिए गए उत्तर, जिसे गलत उत्तर के रूप में चिह्नित किया गया था और पेपर II के प्रश्न संख्या I(xiv) जिसके लिए कोई अंक नहीं दिए गए थे, पर पुनर्विचार की आवश्यकता हो सकती है। हालांकि, हम यह जोड़ने में जल्दबाजी करते हैं कि हमने इस संबंध में कोई अंतिम राय व्यक्त नहीं की है।

3. रिट याचिका खारिज होने के आधार पर याचिकाकर्ता द्वारा स्थापित मामले के संबंध में, यह पेपर-III से संबंधित आधार पर निर्णय पाया गया और इसने पेपर I और II के संबंध में प्रतिवादी नंबर 1 की शिकायत पर फैसला नहीं सुनाया। शायद, इसे प्रतिवादी नंबर 1 द्वारा उजागर नहीं किया गया था। यह देखते हुए कि लंबा समय बीत चुका है, अदालत ने रिट याचिका की अनुमति दी और फैसले को संशोधित किया जिसके द्वारा रिट याचिका खारिज कर दी गई और अदालत ने त्रिपुरा उच्च न्यायालय के रजिस्ट्रार जनरल को मुख्य

परीक्षा के पेपर II और III से संबंधित उत्तर पुस्तिकाओं का पुनर्मूल्यांकन करने के लिए निर्देश दिया इस प्रयोजन के लिए, गौहाटी उच्च न्यायालय की हिरासत में उत्तर पत्रों को सीलबंद कवर में रजिस्ट्रार जनरल, त्रिपुरा उच्च न्यायालय को प्रेषित किया जाना था।

4. हमने अपीलकर्ता के विद्वान वकील और प्रतिवादी नंबर 1 की ओर से उपस्थित विद्वान वकील को सुना है।

5.अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने इस न्यायालय के फैसले के. राजामौली बनाम ए.वी.के.एन. स्वामी जो 2001 (5) एससीसी 37 में रिपोर्ट हुआ पर भरोसा जताया। उक्त निर्णय के अनुसार, यह तर्क दिया गया है कि इस मामले में समीक्षा याचिका सुनवाई योग्य नहीं थी। यह ऐसा मामला नहीं है, जहां विशेष अनुमति याचिका दायर करने से पहले समीक्षा याचिका दायर की गई थी। विशेष अनुमति याचिका दायर करने के बाद समीक्षा याचिका दायर की गई थी और उसके बाद, अकेले इस आधार पर, उच्च न्यायालय द्वारा समीक्षा याचिका पर विचार नहीं किया जाना चाहिए था, तर्क किया गया।

6. दूसरे, वह उस अत्यधिक देरी की ओर इशारा करेंगे जिसके साथ समीक्षा याचिका दायर की गई थी। जैसा कि हमने देखा है, विशेष अनुमति याचिका 2013 में खारिज कर दी गई थी। उसके लगभग 5 साल बाद, वर्तमान समीक्षा याचिका दायर की गई थी। विद्वान वकील चयन के रूप में बाद के घटनाक्रम के तथ्य पर प्रकाश डालते हैं जो रिट याचिका में अंतिम निर्णय की तारीख के बाद शुरू हुए हैं।

7. तीसरा, अपीलकर्ता के विद्वान वकील यह बताएंगे कि इस न्यायालय ने उन परिस्थितियों के बारे में बात की है जो पुनर्मूल्यांकन के आदेश को उचित ठहराते हैं। सबसे महत्वपूर्ण पहलू यह है कि पुनर्मूल्यांकन की मांग करने का कोई अधिकार नहीं है जब तक कि कोई ऐसा प्रावधान न हो जो उम्मीदवार को इसका अधिकार देता हो। यह अविवादित है, कि इस मामले में, ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो उम्मीदवार को पुनर्मूल्यांकन कराने का अधिकार देता हो। ऐसी परिस्थितियों में, उच्च न्यायालय द्वारा समीक्षा याचिका को अनुमति देना और प्रश्न पत्र/ उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन का निर्देश देना उचित नहीं था। इस संबंध में उन्होंने हमारा ध्यान इस न्यायालय के फैसले प्रमोद कुमार श्रीवास्तव बनाम विजय सिंह एवं अन्य तथा अध्यक्ष बिहार लोक सेवा आयोग, पटना एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य 2018 (2) एससीसी 357 की ओर आकर्षित किया।

8. इसके विपरीत, प्रथम प्रतिवादी यह बताएगा कि यह एक ऐसा मामला है जहां परीक्षक ने उसके द्वारा दिए गए सही उत्तरों के लिए उसे अंक नहीं दिए हैं और उच्च न्यायालय को यह पता चला है कि उसके साथ अन्याय हुआ है और उसे हस्तक्षेप करना पड़ा। प्रतिवादी क्रमांक १ के विद्वान वकील ने हमारा ध्यान इस न्यायालय के फैसले प्रमोद कुमार श्रीवास्तव बनाम विजय सिंह एवं अन्य तथा अध्यक्ष बिहार लोक सेवा आयोग, पटना एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य 2018 (2) एससीसी 357 की ओर आकर्षित किया। उक्त निर्णय, निस्संदेह, दो विद्वान न्यायाधीशों द्वारा दिया गया था। इसे अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार निर्धारित किया गया है:-

> "30.2 यदि किसी परीक्षा को नियंत्रित करने वाला कोई क़ानून, नियम या विनियमन किसी उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन या जांच की अनुमति नहीं देता है (जैसा कि इसे प्रतिबंधित करने से अलग है) तो अदालत पुनर्मूल्यांकन या जांच की अनुमति केवल तभी दे सकती है जब इसे बहुत स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया गया हो, बिना किसी भी "तर्क की अनुमानित प्रक्रिया या युक्तिकरण की प्रक्रिया द्वारा" और केवल दुर्लभ या असाधारण मामलों में जब कोई महत्वपूर्ण (Material) त्रुटि हुई हो।

9. वास्तव में, हमने प्रतिवादी नंबर 1 को भी अनुमति दी जो उसके अनुरोध पर प्रस्तुतियाँ देने के लिए व्यक्तिगत रूप से उपस्थित था। वह तथ्यों पर भी जोर देंगे और बताएंगे कि कैसे उन्हें गंभीर अन्याय का सामना करना पड़ रहा है, जो कि उन अंकों को न देने की स्पष्ट गलती के परिणामस्वरूप हुआ है जिनके वे हकदार थे।

10.पहला सवाल जो हमें तय करना चाहिए वह यह है कि क्या हमें इस आधार पर अपील की अनुमति देनी चाहिए कि यह एक ऐसा मामला है जहां विशेष अनुमति याचिका खारिज होने के बाद समीक्षा याचिका दायर की गई थी। निः संदेह , के. राजामौली बनाम. ए.वी.के.एन. स्वामी 2001 (5) एससीसी 37, पर याचिकाकर्ता ने भरोसा किया, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ अभिनिर्धारित किया:-

> "4. कुन्हायमद और अन्य (सुप्रा) के मामले में निर्णय के बाद हमारा विचार है कि जब विशेष अनुमति याचिका दायर की जाती है तो उच्च न्यायालय के मुख्य फैसले के खिलाफ विशेष अनुमति याचिका को खारिज करना प्राङ्न्याय

(Resjuciata)न्याय नहीं होगा। समीक्षा याचिका में पारित आदेश के विरुद्ध समीक्षा याचिका प्रदान की गई उच्च न्यायालय के मुख्य फैसले के खिलाफ विशेष अनुमति याचिका दायर करने से पहले दायर की गई थी। जहां मुख्य निर्णय के खिलाफ विशेष अनुमति याचिका खारिज होने के बाद एक पक्ष लंबे विलंब के बाद इस आधार पर समीक्षा याचिका दायर करता है कि पार्टी विशेष अनुमति याचिका के माध्यम से उपचार की मांग कर रही थी वहां स्थिति अलग होगी। ऐसी स्थिति में समीक्षा दाखिल करना कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।"

11.हालांकि, हमने देखा है कि गंगाधर पालो बनाम राजस्व मंडल अधिकारी एवं अन्य. 2011 के फैसले में एक अन्य बेंच द्वारा एक अलग टिप्पणी की गई थी। में रिपोर्ट की गई (4) एससीसी 602। उक्त फैसले में, दो विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ ने अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार निर्णय लिया है: -

> "10. हमने उपरोक्त फैसले के एससीसी पैरा 4 का सावधानीपूर्वक अध्ययन किया है। उसमें जो देखा गया है वह यह है कि यदि विशेष अनुमति याचिका खारिज होने के बाद उच्च न्यायालय में समीक्षा याचिका दायर की जाती है, तो इसे "सर्वोच्च न्यायालय" के आदेश का अपमान माना जाएगा।" हमारी राय में, उपरोक्त टिप्पणियों को एक मिसाल के रूप में बिल्कुल भी नहीं माना जा सकता है। हम अपमान से नहीं डरते हैं। देखने वाली बात यह है कि कोई कानूनी सिद्धांत निर्धारित किया गया है या नहीं। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि हमारा अपमान हुआ है या नहीं।"

12. न्यायिक राय में दरार को देखते हुए मामले को एक बड़ी बेंच को भेज दिया गया है। इन घटनाक्रमों के आलोक में हमें नहीं लगता कि अपीलकर्ता इस आधार पर राहत का हकदार है कि समीक्षा याचिका विशेष अनुमति याचिका खारिज होने के बाद दायर की गई थी।

13. विचार किया जाने वाला अगला प्रश्न आदेश की खूबियों के संबंध में है। प्रमोद कुमार श्रीवास्तव मामले (सुप्रा) में, तीन विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ ने, वास्तव में, 1984 (4) एससीसी 27 में दो विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ के फैसले को आगे बढ़ाते हुए निम्नानुसार निर्धारित किया: -

7. इसमें कोई विवाद नहीं है कि आयोग के प्रासंगिक नियम के तहत किसी उम्मीदवार को अपनी उत्तर-पुस्तिकाओं का पुनर्मूल्यांकन कराने का अधिकार देने वाला कोई प्रावधान नहीं है। ऐसी स्थिति में, रिट याचिका में अपीलकर्ता द्वारा की गई प्रार्थना पूरी तरह से गलत थी। यह अस्वीकार्य है और विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलकर्ता की उत्तर-पुस्तिका का पुनर्मूल्यांकन कराकर स्पष्ट रूप से गलती की है।

8. विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा एेसा कार्स अपनाने से व्यावहारिक समस्याएं उत्पन्न होंगी। कई उम्मीदवार एक मौका लेना चाहेंगे और अपनी उत्तर-पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए प्रार्थना करना चाहेंगे। स्वाभाविक रूप से, जब भी रिट याचिकायें दायर की जायेगी न्यायालय अलग-अलग तारीखों पर आदेश पारित करेगा। इसके बाद आयोग को व्यक्तिगत अभ्यर्थियों की कॉपियाँ दोबारा मूल्यांकन के लिए परीक्षकों के पास भेजनी होंगी जिसमें समय लगना तय है। आयोग द्वारा आयोजित परीक्षा एक प्रतियोगी परीक्षा है, इसलिए अंतिम परिणाम की घोषणा में अनावश्यक देरी होगी और रिक्तियां लंबे समय तक खाली रहेंगी। यदि कोई अभ्यर्थी पुनर्मूल्यांकन में कम अंक प्राप्त करता है तो क्या होगा? वह इस दलील के साथ आगे आ सकता है कि मूल रूप से उसे दिए गए अंकों पर विचार किया जाए। इस विषय पर स्पष्ट नियमों के अभाव में कई समस्याएं खड़ी हो सकती हैं और व्यापक हित में इनसे बचा जाना चाहिए।"

14.हिमाचल प्रदेश लोक सेवा आयोग बनाम मुकेश ठाकुर एवं अन्य । 2010 (6) एससीसी 759 में , दो विद्वान न्यायाधीशों की एक खंडपीठ ने इस प्रकार निर्णय दिया:-

"20. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, उच्च न्यायालय के लिए प्रश्न पत्रों और उत्तर पुस्तिकाओं की स्वयं जांच करना स्वीकार्य नहीं था, खासकर, जब आयोग ने उम्मीदवारों की पारस्परिक योग्यता का आकलन किया था। यदि प्रश्न पत्र या उत्तर का मूल्यांकन करने में कोई विसंगति थी यह परीक्षा में शामिल होने वाले सभी अभ्यर्थियों के लिए हो सकता है, न कि केवल प्रतिवादी के लिए। यह संयोग की बात है कि उच्च न्यायालय कानून से संबंधित उत्तर पुस्तिकाओं की जांच कर रहा था। यदि

यह अन्य विषयों जैसे भौतिकी, रसायन विज्ञान और गणित की तरह होते तो हम यह समझने में असमर्थ हैं कि क्या ऐसी प्रक्रिया /कोर्स पाठ्यक्रम उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया जा सकता था। इसलिए, हमारी सुविचारित राय है कि ऐसा कोर्स उच्च न्यायालय के लिए स्वीकार्य नहीं था।"

(जोर दिया गया)

इसे और अधिक महत्वपूर्ण रूप से इस प्रकार रखा गया था: "

24 उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन का मुद्दा अब कोई अभिन्न अंग नहीं रह गया है। इस मुद्दे पर महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक शिक्षा बोर्ड विरूद्घ के वी. परितोष भुपेशकुमार शेठ (1984) 4 एससीसी 27 के मामले में इस न्यायालय द्वारा विस्तार से विचार किया गया था; , जिसमें इस न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि पुनर्मूल्यांकन के प्रावधान के अभाव में, इस आशय का निर्देश न्यायालय द्वारा जारी किया जा सकता है। न्यायालय ने आगे कहा कि नियमों/विनियमों में शामिल नीतिगत निर्णय भी पुन: जाँच/सत्यापन/पुनर्मूल्यांकन का प्रावधान न करने को तब तक चुनौती नहीं दी जा सकती जब तक कि यह दिखाने के लिए आधार न हों कि नीति स्वयं कुछ वैधानिक प्रावधान का उल्लंघन करती है।"

15. प्रमोद कुमार श्रीवास्तव निर्णय (सुप्रा) का उल्लेख करते हुए इसे इस प्रकार निर्धारित किया गया:-

"26. इस प्रकार, इस विषय पर कानून इस प्रभाव पर उभरता है कि क़ानून या वैधानिक नियमों/विनियमों के तहत किसी भी प्रावधान की अनुपस्थिति में, न्यायालय को आम तौर पर पुनर्मूल्यांकन का निर्देश नहीं देना चाहिए।"

16. केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड में सचिव, अखिल भारतीय प्री-मेडिकल/प्री-डेंटल प्रवेश परीक्षा एवं बनाम खुशबू श्रीवास्तव एवं अन्य। 2014 (14) एससीसी 523 में, फिर से दो विद्वान न्यायाधीशों की एक पीठ ने पहले के निर्णयों की समीक्षा करने के बाद निम्नानुसार निर्णय लिया: -

"9. हमने पाया कि प्रमोद कुमार श्रीवास्तव बनाम बिहार लोक सेवा आयोग;

(2004) एससीसी 714 मामले में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ ने स्पष्ट रूप से महाराष्ट्र राज्य माध्यमिक और उच्च माध्यमिक शिक्षा बोर्ड बनाम परितोष भूपेशकुमार सेठ 1984 4 एससीसी (2) पर भरोसा करते हुए फैसला सुनाया है, कि प्रासंगिक नियमों में उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए किसी प्रावधान के अभाव में, किसी भी परीक्षा में किसी भी उम्मीदवार को अपने अंकों के पुनर्मूल्यांकन का दावा करने या मांगने का कोई अधिकार नहीं है। प्रमोद कुमार श्रीवास्तव बनाम बिहार लोक सेवा आयोग में निर्णय; (2004) 6 एससीसी 714, इसके बाद माध्यमिक शिक्षा बोर्ड बनाम प्रवास रंजन पांडा (2004) 13 एससीसी 383 में इस न्यायालय की एक और तीन-न्यायाधीश पीठ ने निर्णय लिया; ,जिसमें 90% या उससे अधिक अंक प्राप्त करने वाले सभी परीक्षार्थियों की उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए उच्च न्यायालय के निर्देश को कानून की दृष्टि से अस्थिर माना गया क्योंकि परीक्षा आयोजित करने वाले माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, उड़ीसा के नियमों में उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए कोई प्रावधान नहीं है।"

17. आख़िरकार, यह रण विजय सिंह और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य। 2018 (2) एससीसी 357 में बताया गया कि न्यायालय ने निष्कर्ष निकालना शुरू कर दिया जिसमें पैरा 30.2 शामिल है। हम पैरा 30.5 में भी निष्कर्ष देख सकते हैं जो इस प्रकार है:-

"30.5 संदेह की स्थिति में, लाभ उम्मीदवार के बजाय परीक्षा प्राधिकारी को जाना चाहिए।"

18. हमने इस न्यायालय के निर्णयों पर गौर किया है। निस्संदेह, तीन न्यायाधीशों की पीठ ने यह व्यवस्था दी है कि पुनर्मूल्यांकन के लिए किसी प्रावधान के अभाव में पुनर्मूल्यांकन का दावा करने या मांगने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है। निस्संदेह, कोई प्रावधान नहीं है. वास्तव में, उच्च न्यायालय ने भी आक्षेपित निर्णय में उक्त आधार पर कार्यवाही की है। पहला सवाल जो हमें इसका उत्तर देना होगा कि क्या किसी प्रावधान के अभाव के बावजूद, क्या अदालतें संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत पुनर्मूल्यांकन को निर्देशित करने के अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में पूरी तरह से शक्ति से वंचित

हैं? यह सच है कि परमादेश की रिट मांगने का अधिकार कानूनी अधिकार के अस्तित्व और सार्वजनिक कर्तव्य को पूरा करने के लिए उत्तर देने वाले के साथ संबंधित कर्तव्य पर आधारित है। इस प्रकार, अधिकार के रूप में, यह स्पष्ट है कि प्रथम प्रतिवादी पुनर्मूल्यांकन की मांग करने वाली रिट याचिका या समीक्षा याचिका को बरकरार नहीं रख सका।

19. हालाँकि सवाल यह उठता है कि भले ही पुनर्मूल्यांकन की मांग करने का कोई कानूनी अधिकार नहीं है, फिर भी ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं जो न्यायालय को किसी भी संदेह में छोड़ देती हैं। कुछ परिस्थितियों में रिट कर्ता के साथ गंभीर अन्याय हो सकता है। ऐसा मामला सामने आ सकता है जहां पुनर्मूल्यांकन का कोई प्रावधान न होने के बावजूद यह पता चले कि सही उत्तर देने के बावजूद कोई अंक नहीं दिए गए हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह उस मामले तक ही सीमित होना चाहिए जहां उत्तर की शुद्धता के बारे में कोई विवाद नहीं है। इसके अलावा, यदि कोई संदेह है, तो संदेह का समाधान उम्मीदवार के पक्ष में नहीं बल्कि परीक्षा निकाय के पक्ष में किया जाना चाहिए। अनुच्छेद 226 के तहत व्यापक शक्ति तब भी उपलब्ध रह सकती है, व जहां पुनर्मूल्यांकन का कोई प्रावधान न हो वहां भी जहां एक उम्मीदवार ने सही उत्तर देने के बावजूद और जिसके बारे में थोड़ा सा भी संदेह नहीं किया जा सकता है, उसनेगलत उत्तर दिया है, उसे गलत उत्तर माना जाता है और परिणामस्वरूप उम्मीदवार को किसी भी अंक का हकदार नहीं पाया जाता है।

20. क्या दूसरी परिस्थिति को रिट न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाना चाहिए, क्या रिट न्यायालय अपने पास मौजूद शक्ति के विशाल भंडार के बावजूद असहाय हो सकता है? यह कहना एक बात है कि पुनर्मूल्यांकन के लिए प्रावधान की अनुपस्थिति उम्मीदवार को मूल्यांकन के अधिकार का दावा करने में सक्षम नहीं बनाएगी और दूसरी बात यह है कि किसी भी परिस्थिति में जहां पुनर्मूल्यांकन के लिए कोई प्रावधान नहीं है, क्या वहां रिट कोर्ट में अपनी निस्संदेह संवैधानिक शक्तियों का प्रयोग करेगा ? हम दोहराते हैं कि उक्त स्थिति केवल दुर्लभ और असाधारण हो सकती है।

21. इसलिए हमनें जो निष्कर्ष रण विजय सिंह और अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य। 2018 (2) एससीसी 357 के पैरा 30.2 से निकाला है उसे प्रकाश/आलोक में हम समझेंगे केवल उपरोक्त प्रकाश में। हमने वी.एस.अच्युतन बनाम मुकेश ठाकुर 2010

(6) एससीसी 759 के मामले में पहले भी देखा है, पूरे मामले के सर्वेक्षण के बाद पैराग्राफ 26 में दो जजों की बेंच ने यह भी समझा है कि किसी भी प्रावधान के अभाव में कानून कोर्ट को आम तौर पर पुनर्मूल्यांकन का निर्देश नहीं देना चाहिए।

22. इस मामले में हम पहले ही नोट कर चुके हैं कि परिणामों को चुनौती देने और पुनर्मूल्यांकन की मांग करते हुए रिट याचिका दायर की गई थी। वर्ष 2012 में उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका खारिज कर दी गई। विशेष अनुमति याचिका वर्ष 2013 में खारिज कर दी गई थी। समीक्षा याचिका लगभग 5 साल बाद दायर की गई है। अंतराल में, नए चयन के रूप में पर्यवेक्षणीय विकास हुआ। हालांकि यह सच हो सकता है कि समीक्षा याचिका दायर करने में हुई देरी को माफ कर दिया गया है, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि न्यायालय जहां अनुच्छेद 226 के तहत अपने विवेकाधीन क्षेत्राधिकार का प्रयोग करता है, वह बाद के विकास और समय बीतने के प्रभाव से बेखबर हो जाएगा। इस न्यायालय के निर्णय में भी यू.पी.पी.एस.सी. इसके अध्यक्ष एवं बनाम राहुल सिंह और अन्य ने 2018 (2) एससीसी 357 में जो प्रथम प्रतिवादी के अनुसार उच्च न्यायालय के हस्तक्षेप का आधार बनता है, हालांकि स्पष्ट रूप से ऐसा नहीं कहा गया है, न्यायालय ने जो निर्धारित किया है वह यह है कि न्यायालय अन्य बातों के साथ-साथ केवल तभी पुनर्मूल्यांकन की अनुमति दे सकता है। जब इसे तर्क की किसी भी अनुमानित प्रक्रिया के बिना या युक्तिकरण की प्रक्रिया के बिना और केवल दुर्लभ या असाधारण मामलों में भौतिक त्रुटि के कमीशन पर बहुत स्पष्ट रूप से प्रदर्शित किया जाता है। मामले को दुर्लभ या असाधारण मामले के रूप में चिह्नित करना सही नहीं हो सकता है जब प्रथम प्रतिवादी लगभग 5 साल की देरी से अदालत में पहुंचता है और बाद की घटनाओं को उस पर और अदालत पर हावी होने देता है। हमें लगता है कि हाई कोर्ट ने इस पहलू की पूरी तरह से सराहना नहीं की । यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह मुख्य समीक्षा मामले की दोबारा सुनवाई नहीं है। किसी स्पष्ट त्रुटि पर अधिक बहस किए बिना केवल उसका पता लगाने पर ही समीक्षा की जाएगी। क्या ये कोई ऐसा मामला था? यहीं पर हमें परीक्षा के भाग III में प्रश्न से संबंधित अपीलकर्ता के तर्क पर ध्यान देना चाहिए, जिसने अदालत का ध्यान इस कारण से आकर्षित किया है कि प्रथम प्रतिवादी ने अकेले ही इस पहलू को उच्च न्यायालय के समक्ष रखा था। रिट याचिका में उच्च न्यायालय की अपील अपीलकर्ता की इस दलील को पुष्ट

करती प्रतीत होती है। पेपर III के मूल्यांकन में विसंगति से संबंधित मुद्दे पर फैसले में विस्तार से चर्चा की गई है। इस न्यायालय द्वारा उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण को प्रभावित नहीं किया गया है। इसके बावजूद उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में भाग-1 और भाग-2 के प्रश्नों से संबंधित याचिका को आगे बढ़ाया और समीक्षा याचिका पर विचार करते हुए लगभग 5 साल बीतने के बाद भी राहत दी। यह वर्तमान अपील की अनुमति देने के लिए पर्याप्त है।

इन सबके बावजूद हम मामले की खूबियों पर कुछ टिप्पणियाँ भी करेंगे।

23. प्रथम प्रतिवादी को 5 अंक कम मिले हैं। पैरा 25 में दिए गए फैसले में, डिवीजन बेंच ने चार प्रश्न उठाए। न्यायालय ने पहले प्रतिवादी द्वारा 4 प्रश्नों के दिए गए उपरोक्त उत्तरों के आधार पर अपना हस्तक्षेप तय किया है। यदि हम प्रश्न 3(xiii) लेते हैं, तो प्रश्न इस प्रकार था:

> "पेपर-II का प्रश्न क्रमांक-3(xiii)।
>
> आदेश xvii नियम 1 सी.पी.सी. के तहत स्थगन मुकदमे की सुनवाई के दौरान किसी भी परिस्थिति में किसी पक्ष को 3 बार से अधिक की अनुमति नहीं दी जा सकती (मार्क -1)"।

24. पहले उत्तरदाता का उत्तर यह है कि यह गलत है लेकिन उसे कोई अंक नहीं दिया गया है क्योंकि स्पष्ट रूप से क्रॉस चिन्ह दिया गया है क्योंकि उसने गलत उत्तर दिया है। आदेश XVII नियम 1 इस प्रकार है:

> "1. न्यायालय समय दे सकता है और सुनवाई स्थगित कर सकता है - (1) न्यायालय, यदि पर्याप्त कारण दिखाया गया है, तो मुकदमे के किसी भी चरण में, पार्टियों या उनमें से किसी को समय दे सकता है, और समय-समय पर सुनवाई स्थगित कर सकता है लिखित रूप में दर्ज किए जाने वाले
> कारणों के लिए मुकदमे की सुनवाई: बशर्ते कि मुकदमों की सुनवाई के दौरान किसी भी पक्ष को तीन बार से अधिक स्थगन नहीं दिया जाएगा।

25. प्रथम प्रतिवादी का मामला सलेम एडवोकेट्स बार एसोसिएशन केस 2005 (6) एससीसी 344 में इस न्यायालय के फैसले पर आधारित है। उनके अनुसार भले ही आदेश XVII नियम 1 के तहत किसी भी परिस्थिति में किसी पक्ष को स्थगन नहीं दिया जा सकता है। तीन बार से अधिक मुकदमे के लिए, इस न्यायालय ने उपरोक्त निर्णय में यह विचार किया है कि तीन बार से अधिक स्थगन दिया जा सकता है। यह स्पष्ट है कि आदेश XVII नियम 1 के प्रावधानों के अनुसार, पहले प्रतिवादी द्वारा दिया गया उत्तर गलत है। न्यायालय द्वारा दी गई व्याख्या के आधार पर ही स्थगन 3 बार से अधिक हो सकता है। यदि जांच करने वाली संस्था आदेश XVII नियम 1 के वास्तविक प्रावधान के आधार पर उत्तरों का मूल्यांकन करने के लिए आगे बढ़ी है, तो यह ऐसा मामला नहीं है जहां विशेष रूप से पुनर्मूल्यांकन का कोई अधिकार नहीं है, हम हस्तक्षेप करने के लिए राजी हैं। हम उस दृष्टिकोण को मानेंगे जो जांच करने वाली संस्था ने लिया होगा।

26. अगला प्रश्न प्रश्न संख्या 2 (xviii) है जो इस प्रकार है:

"प्रश्न संख्या-2(xviii) कागज संख्या-(II) में वादी परिसीमा अधिनियम की धारा 5 के तहत निर्धारित परिसीमा की अवधि के विस्तार की मांग करते हुए एक आवेदन दायर कर सकता है (मार्क - 1)"।

दिए गए विकल्प इस प्रकार हैं:

(ए) मुकदमा दायर करने के लिए,

(बी) अपील दायर करने के लिए

(सी) आदेश XXI सीपीसी के तहत आवेदन दाखिल करने के लिए अपील

(डी) उपरोक्त सभी के लिए।

27. पहले प्रतिवादी की शिकायत यह है कि उसने उत्तर क्रमांक बी पर निशान लगाया लेकिन उसे क्रॉस चिन्ह दिया गया जिसका अर्थ है कि उसका उत्तर गलत है जबकि उसका तर्क है कि अन्य सभी उत्तर अर्थात् ए, सी और डी गलत थे और यह केवल बी है। जो संभवत: सही हो सकता है.

28. हम इस आधार पर आगे बढ़ेंगे कि प्रथम प्रतिवादी के तर्क में दम है। अगला प्रश्न पेपर संख्या 2 में प्रश्न संख्या 3 (xv) है। सवाल यह था कि "अपीलीय अदालत किसी

पक्ष को अतिरिक्त सबूत पेश करने की अनुमति नहीं दे सकती।" लेकिन इसका जवाब 'गलत' दिया गया. प्रतिवादी को क्रॉस का चिह्न दिया गया और कोई अंक नहीं दिया गया। यहां भी हम इस आधार पर आगे बढ़ते हैं कि पहले प्रतिवादी की वैध शिकायत हो सकती है। अंत में, पेपर नंबर 2 में प्रश्न नंबर 1 (xiv) है जो इस प्रकार है:

"प्रश्न संख्या-1(xiv) पेपर संख्या-(II) में वादी ने मामले को साबित करने के लिए प्रतिवादियों पर 1,00,000/- रुपये की वसूली के लिए मुकदमा दायर किया, वादी ने अपने खाते की किताबों में प्रविष्टियों को साबित कर दिखाया प्रतिवादी को उक्त राशि का ऋणी होना चाहिए (मार्क 3)"।

29. याचिकाकर्ता का उत्तर इस प्रकार प्रतीत होता है:

"सिविल मामले में, मामला संभावनाओं की प्रबलता से साबित होता है। लेकिन उपरोक्त मामले में, न तो लिखित और न ही धन प्राप्ति साबित हुई।

इसलिए, खाते की पुस्तकों में प्रविष्टियाँ पर्याप्त नहीं हैं।"

30. यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि यह वस्तुनिष्ठ प्रकार का प्रश्न नहीं है, अधिकतम अंक 3 हैं। यह ऐसा मामला नहीं है, भले ही हम इस आधार पर आगे बढ़ें कि उत्तर सही है, अंक ऐसे ही दिए जाएंगे। हमने देखा कि 5 प्रश्नों के लिए, उत्तरदाता नंबर 1 को 1 अंक दिया गया है, जबकि अधिकतम 3 अंक हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पूरे अंक देना केवल उत्तर की शुद्धता पर आधारित नहीं है।

31. हालाँकि, हम अपने निष्कर्ष को इस आधार पर आराम देना चाहेंगे कि पुनर्मूल्यांकन प्रदान करने वाले प्रावधान द्वारा दिए गए अधिकार से लैस नहीं होने के कारण और जो तथ्य हम पहले ही निर्धारित कर चुके हैं और जिन कारणों का हमने उल्लेख किया है, हम सोचेंगे कि उच्च न्यायालय समीक्षा याचिका की अनुमति नहीं देनी चाहिए थी। हम संयोगवश यह भी देख सकते हैं कि उच्च न्यायालय ने एक ओर तर्क दिया है कि फैसले में रिट याचिका में पेपर III से संबंधित शिकायत थी। इसके बावजूद पेपर 2 और पेपर 3 के मूल्यांकन का निर्देश दिया गया है. यह सच हो सकता है कि पेपर III का मूल्यांकन करने का निर्देश एक गलती हो सकती है, लेकिन भले ही इसे पेपर नंबर I और II के रूप में माना जाए, उच्च न्यायालय ने पेपर नंबर II के उत्तर के आधार पर अपना हस्तक्षेप किया है। ऐसी परिस्थितियों में, हम अपील की अनुमति देते हैं और आक्षेपित निर्णय को रद्द कर देते हैं।

उच्च न्यायालय के समक्ष दायर समीक्षा याचिका खारिज की जाती है। वहां हर्जे के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

अपील की अनुमति

विशाल शर्मा